IJCBM, Vol.-1; Issue-2 (Oct.-Dec.) 2025 : PP-59-66

Indian Journal of Commerce, Business & Management (IJCBM)

A Peer Reviewed Research journal of Commerce, Business & Management

ISSN : 3108-057X (Online)
3108-1282 (Print)
Vol.-1; Issue-2 (Oct.-Dec.) 2025
Page No.- 59-66
©2025 **IJCBM**
https:// ijcbm.gyanvividha.com

Author's :

डॉ. दिनेश कुमार चौधरी

असिस्टेन्ट प्रोफेसर (वि.सं.) राजकीय महाविद्यालय, कल्याणपुर.

Corresponding Author :

डॉ. दिनेश कुमार चौधरी

असिस्टेन्ट प्रोफेसर (वि.सं.) राजकीय महाविद्यालय, कल्याणपुर.

कामकाजी महिलाएं और दोहरी भूमिका की चुनौतियाँ

महिलाओं की स्थिति में औद्योगिक क्रान्ति के पश्चात् बहुत व्यापक परिवर्तन हुआ। कृषि समाज में रोजगार काम आदि के अवसर बहुत सीमित थे। औद्योगिक समाज में महिलाओं को काम के असंख्य अवसर प्राप्त हुए। आधुनिकीकरण की प्रक्रिया ने महिला सम्बन्धी परम्पराओं पर अपना प्रभाव डाला। एम.एन. श्रीनिवास (1972) ने पश्चिमीकरण की प्रक्रिया को कई अर्थों में महिलाओं की प्रस्थिति पर प्रभाव डालने बाला प्रमुख कारक माना था। उनका मानना था कि पश्चमीकरण का एक प्रभाव नए सामाजिक मूल्यों की उत्पत्ति था और ये नए मूल्य निरपेक्षता, समानता तथा शोषण विहीन समाज की कल्पना करते थे। इन सामाजिक मूल्यों में परिवर्तनों ने महिलाओं के प्रति दृष्टिकोणों पर भी प्रभाव डाला। औद्योगिक विकास के साथ महिलाओं की प्रत्येक क्षेत्र में मांग बढ़ने लगी। धीरे-धीरे पूरे विश्व में महिलाएं विभिन्न प्रकार का कार्य विभिन्न स्थानों पर करने लगीं चाहे वे कारखाने, मिल या फैक्ट्री हो या सरकारी अथवा गैर-सरकारी कार्यालय। 19वीं और 20वीं सदी के आते-आते तो कार्यशील महिलाओं की संख्या बहुत तेजी से बढ़ती जा रही है। कपूर (1970) के अनुसार 1943 में पहली बार राशनिग प्रणाली लागू किये जाने के दौरान और उसके बाद 1947 में देश का विभाजन होने के बाद, मध्यमवर्ग की स्त्रियां बढ़ी संख्या में कार्यालयों में काम करने के लिए घर से निकली। इस प्रकार हम देखते है कि मध्य और उच्च वर्ग की महिलाओं द्वारा दफ्तरों में क्लर्क और अफसरों के रूप में नौकरी करने जाना भारत में स्वतंत्रोतर काल की घटना है। कार्यालयों विद्यालयों, राजकीय संस्थानों आदि प्रायः सभी क्षेत्रों में महिलाएं कार्यरत हैं। आज वे सफलतापूर्वक राजनीतिक, प्रशासनिक, पुलिस सामाजिक, व्यावसायिक साहित्यिक, विधि एवं कीड़ा इत्यादि क्षेत्रों में कार्य कर रही है तथा घर और बाहर के दोहर दायित्व निभा रही है।

प्राचीन समय से ही महिलाओं का दमन एवं उत्पीड़न होता आ

रहा है तथा महिलाओं को सामाजिक एवं आर्थिक रूप से समाज का उपेक्षित वर्ग समझा जाता रहा है। महिलाओं ने हमेशा निम्न स्थिति का सामना किया है। विश्व भर में करोड़ों महिलाएं दयनीय जीवन जी रही हैं तथा उन्हें केवल महिला होने के आधार पर अपने मूल मानवाधिकारों से वंचित होना पड़ता है, भारत में विभिन्न संस्कृतियों का संगम है। स्त्री हर संस्कृति के केंद्र में होकर भी केंद्र से दूर है। सिमोन द बोउवा का कथन है. 'स्त्री पैदा नहीं होती, बनाई जाती है।' समाज अपनी आवश्यकता के अनुसार स्त्री को ढालता आया है और उसके सोचने से लेकर उसके जीवन जीने के ढंग को पुरुष अभी तक नियंत्रित करता आया है। आज जहाँ महिलाएं चिकित्सा, कानून, पत्रकारिता, शिक्षा, और इंजीनियरिंग के क्षेत्र में अपनी उल्लेखनीय सेवाएं दे रही हैं वहीं पुलिस और सेना में भी वे जिम्मेदारी निभा रही हैं, परन्तु अधिकतर महिलाओं को इन जिम्मेदारियों के साथ-साथ घर परिवार की जिम्मेदारी भी उठानी पड़ती है, जिसका उनके स्वास्थ्य पर अच्छा प्रभाव नहीं पड़ता है।

इन दोहरी जिम्मेदारियों के बोझ के चलते तनाव एवं अन्य बिमारियों से घिर चुकी महिलाओं को अब अपने लिए समय निकालने की आवश्यकता है। आज अपनी इस स्थिति के लिए कुछ हद तक महिला स्वयं जिम्मेदार है। खाना बनाने से लेकर बच्चों की परवरिश को वह अपनी प्राथमिकता मानती है, इस सोच में बदलाव बेहद जरूरी है। ऐसे में देखा गया है कि जिन घरों में पति या अन्य परिजन महिला के कामकाज में हाथ बंटाते हैं वहां महिलाओं का स्वास्थ्य अपेक्षाकृत अधिक बेहतर पाया जाता है। एक स्वस्थ महिला ही, स्वस्थ परिवार और स्वस्थ समाज का निर्माण करती है इसलिए महिलाओं को तनावमुक्त और काम के बोझ से मुक्त रखना पूरे परिवार की जिम्मेदारी है। हम देखते हैं कि जब भी कामकाजी महिलाओं की बात आती है तो एक ऐसी तस्वीर सामने आती है जिसमें एक महिला के बहुत से हाथ दिखाए गए हैं और हैरानी की बात यह है कि प्रत्येक हाथ कोई ना कोई काम करते हुए दिखाया गया है कुछ हाथ घरेलू कार्य जैसे सफाई, खाना बनाना और बच्चों की देखभाल करते नजर आते हैं, तो कुछ हाथ नौकरी से जुड़े अन्य कार्य करते हुए दिखाए जाते हैं। उस तस्वीर को देखकर ऐसा लगता है कि महिलाएं बिना रुके, बिना थके हर काम कर सकती हैं जैसे कोई मशीन या रोबोट हो। क्या वास्तव में ये तस्वीर महिला सशक्तिकरण की सही परिभाषा को बयान करती है? या फिर कामकाजी महिलाओं के रोजाना की दिनचर्या की कड़वी सच्चाई, जो महिलाओं पर काम के दोहरे बोझ को बयान करती है।

देश में कामकाजी महिलाओं का इतिहास कोई बहुत नहीं है। इसे यूं मान लेना चाहिए कि स्वतंत्रता के बाद भारतीय संविधान में स्वतंत्रता और समानता के सिद्धांत से प्रभावित होकर महिलाओं में आत्मनिर्भरता के लिए जो नई सोच, नई चेतना पैदा हुई यह उसी का परिणाम है। स्त्री शिक्षा में जो प्रगति हुई. उसी ने इस क्षेत्र में लोगों को उत्साहित किया। अच्छे जीवन स्तर की इच्छा को बल मिला। महिलाओं को नौकरी करनी चाहिए या नहीं, यह बहुत पुराना विवाद है। इस पर आज तक कोई सर्वमान्य निर्णय न हुआ, न होगा। भविष्य में इस बारे में लोगों की क्या मान्यता होगी, यह भी नहीं कहा जा सकता। इतना अवश्य है कि स्त्रियों को पारिवारिक अपेक्षाओं की पूर्ति के लिए नौकरी अवश्य करनी चाहिए। इस विषय में किसी प्रकार की हीनता अथवा पूर्वाग्रही सोच मन में नहीं आनी चाहिए। विकास की प्रक्रिया में भी निःसंदेह महिलाओं के योगदान को नजर अंदाज नहीं किया जा सकता। विश्व में आज बढ़ते विकास की प्रक्रिया को सतत् विकास के नाम से जाना जाता है। भारत में महिलाओं की स्थिति से सम्बंधित समिति का मानना है कि समाज के विकास में महिलाओं की भागीदारी तय करते समय व्यक्तिगत स्वतंत्रता, समानता, परिवार में स्थिति, सामुदायिक भागीदारी और वैश्विक समाज में महिला और पुरुष दोनों को समान रूप से देखे जाने की आवश्यकता है। वर्ष 1975 को अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष के रूप में घोषित किया गया जिसका उद्देश्य विकास में महिला विकास को बढ़ावा देना और महिलाओं को अपने अधिकार के प्रति जागरूक करना था। भूमिका को महत्वपूर्ण मानने वाले विद्वानों का विचार है कि एक व्यक्ति समाज में जो भूमिका निभाता है उससे उसका दृष्टिकोण प्रभावित होता है। मध्यम वर्ग की

स्त्रियां आज जो शिक्षित और नौकरी करने वाली स्त्रियों की भूमिका निभा रही हैं उससे उन्हें एक नया सामाजिक तथा आर्थिक दर्जा प्राप्त हुआ है तथा जीवन के विभिन्न पहलुओं के प्रति उनका दृष्टिकोण भी प्रभावित हुआ है।

दूसरे समाजशास्त्रियों के अध्ययनों से भी पता चलता है कि नौकरी करने वाली शिक्षित स्त्रियों का दृष्टिकोण, विशेषकर विवाह और परिवार के भीतर तथा बाहर के अपने अधिकारों और विशेषाधिकारों की ओर बहुत कुछ बदल चुका है। लेकिन क्या स्त्री के उत्तरदायित्व और दर्जे की ओर पुरुष वर्ग और समाज का भी दृष्टिकोण बदला है? क्या इस देश के संविधान और विभिन्न काननी और राजनैतिक अधिकारों ने सिद्धान्त रुप में स्त्रियों को जो सामाजिक दर्जा दिया है वह स्त्रियों को प्राप्य हो सका है? स्त्री के दृष्टिकोण में जो परिवर्तन आये है क्या उसकी वजह से पुरुषों के साथ के उसके अन्त्तवैयक्तिक सम्बन्धो में कटुता आई है? यदि ऐसा है तो परिवार के भीतर या बाहर उठने वाले संघर्षों एवं तनाव के क्या कारण है? किसी भी समाज की तस्वीर बदलने में महिलाओं का योगदान महत्त्वपूर्ण होता है। नेपोलियन बोनापार्ट ने कहा था कि मुझे योग्य माता दे दो मैं तुमको योग्य राष्ट्र दूँगा। आज हर क्षेत्र में महिलाएँ पुरुषों के कन्धे से कन्धा मिलाकर कार्य कर रही है। महिला सशक्तीकरण के दौर में महिलाओं ने घर की देहली से बाहर कदम बढ़ाकर स्वयं कामकाजी महिला होने का गौरव हासिल किया है तथा स्वयं की व समाज की स्थिति को परिवर्तित करने का बीड़ा उठाया है।

शिक्षित कार्यशील महिलाओं की दोहरी भूमिका से एक ओर पारिवारिक सामंजस्य विघटित हुआ है, तो दूसरी ओर पारिवारिक असंगतियों के परिणाम स्वरुप इनकी कार्यकारी भूमिकाएं प्रभावित हुई है। ज्यादातर कार्यशील महिलाएं यह स्वीकार करती है कि उनके द्वारा नौकरी करने से पारिवारिक जीवन में तनाव उत्पन्न हुआ है और इस तनाव के परिणाम स्वरुप परिवार में विभिन्न असंगतियां उत्पन्न हुई है, अत्यधिक व्यस्तता के कारण बच्चों, पति एवं पारिवारिक सदस्यों के प्रति ध्यानस्थ न दिखा पाना, रिश्तेदारों के लिए समय न निकाल पाना एवं पारिवार को अधिक समय ना दे पाना आदि। इन असंगतियों से न केवल पारिवारिक जीवन में तनाव उत्पन्न हुआ है, बल्कि इसका असर उनके कार्यकारी संबंधों पर भी पड़ता है क्योंकि जब परीवार के तनाव से मन अशान्त रहता है. तो व्यवसाय सम्बन्धी भुमिकाएं भी प्रभावित होती हैं। कार्यरत महिलाओं की गृहिणी की भूमिका में मां और व्यवसायी की भूमिका में काफी अंशों तक भूमिका तनाव व भूमिका संघर्ष उपस्थित हैं।

शोध के दौरान यह पाया गया कि इन महिलाओं ने केवल मात्र आर्थिक कारण से व्यवसाय को नहीं अपनाया बल्कि उच्च शिक्षा एवं अवकाश का समय सदुपयोग करने, विशेष स्तर बनाए रखने, पति की आय में वृद्धि के विचार से भी इन्होंने व्यवसाय अपनाया है। इनके विवाह के बाद कामकाजी बने रहने का कारण भी आर्थिक तंगी नहीं था बल्कि पति की एवं स्वयं भी इनके व्यवसाय एवं प्रगति में रुचि थी। अध्ययन के दौरान या पाया गया कि कार्यशील महिलाएं चाहे आर्थिक कारणों से नौकरी कर रही हो या स्वयं की इच्छा से, किंतु ज्यादातर महिलाएं कार्यकारी व व्यवसाय की भूमिका निर्वाह में कई कारणों से कहीं न कहीं संघर्ष अनुभव करती हैं किंतु फिर सभी महिलाएं पारिवारिक एवं व्यवसायिक सामंजस्य बनाए हुए हैं एवं उनके दांपत्य संबंधों पर प्रभाव नहीं पाते हैं क्योंकि ये सभी महिलाएं पति की सहमति से ही नौकरी करती है। इस सामंजस्य का एक कारण यह भी था कि ये महिलाएं स्वयं की इच्छा से नौकरी करती है, दबाव स्वरूप नहीं। कुछ महिलाओं पर आर्थिक दबाव पाया गया। पारिवारिक सामंजस्य में बच्चों की देखभाल, पति की देखभाल, घर का काम, व्यावसायिक प्रगति के प्रति आकांक्षा, विशेष स्तर से रहने की आकांक्षा, बच्चों के भविष्य के प्रति आकांक्षा आदि रूप में प्रकट होती है।

पूर्व अध्ययन

1. सरिता वाशिष्ठ (2010), महिला सशक्तिकरणश्, प्रस्तुत पुस्तिका में लेखिका ने अपने अध्ययन के माध्यम से महिला सशक्तिकरण और कामकाजी महिलाओं के अधिकारों पर प्रकाश डाला है। उनके अनुसार महिला

सशक्तिकरण सही मायनों में तभी सफल हो सकता है जब महिलाओं को अपने कामकाजी अधिकारों का ज्ञान हो। उनके अनुसार जागरूकता एक बहुत बड़ी कमी है। जिसके कारण कामकाजी महिलाएं अपने अधिकारों का लाभ नहीं उठा पाती।

2. विप्लव (2010), महिलाएं एवं राजनीति, प्रस्तुत पुस्तक में लेखक ने अपने अध्ययन में महिला और राजनीति के ऊपर प्रकाश डाला है। उनके अनुसार आधुनिक महिलाएं घर की चार दिवारी की बेड़ियों को तोड़ते हुए घर से बाहर निकल रही है और अन्य क्षेत्रों के साथ-साथ राजनीतिक विकास में भी महत्वपूर्ण योगदान दे रही है, जो सही मायनों में महिला सशक्तिकरण का संकेत है।
3. रेखा तिवारी, दिवाकर शर्मा (2013), प्रस्तुत पुस्तक में लेखिका ने बताया है कि कामकाजी महिला शब्द का प्रयोग प्रायः नौकरी करने वाली महिलाओं के सन्दर्भ में किया जाता है अर्थात वे महिलाएँ जो बाहर नियमित रूप से आर्थिक और व्यवसायिक गतिविधियों में व्यस्त रहती हैं। कामकाजी महिला शब्द उन स्त्रियों के लिए प्रयुक्त हुआ है जो वेतन वाले कार्य में लगी हैं। काम करने का अर्थ स्वयं काम करना ही नहीं, दूसरे व्यक्तियों से काम लेना भी है तथा उनके कार्य की निगरानी करना एवं निर्देशन देना आदि भी सम्मिलित है।
4. निर्मला के चित्रोड़ा (2016), भारत में कामकाजी महिलाओं की स्थिति, प्रस्तुत पुस्तक में लेखक ने बताया है कि भारत में महिलाओं की स्थिति ने बड़े-बड़े उतार-चढ़ाव देखे है। वैदिक युग में उसे देवी की तरह पूजा जाता था वहीं मुस्लिम युग में उसे दास की तरह रखा जाता था। स्वतन्त्रता के बाद से पलड़ा महिलाओं के पक्ष में रहा है या यूँ भी कह सकते है आजादी के बाद अनेक ऐसे सुधार हुए जिनसे महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में काफी सुधार हुआ। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि भारत का चाहे खेल जगत हो या फिर स्वास्थ्य जगत महिलाएं किसी भी क्षेत्र में पुरुषो से पीछे नहीं है। लेकिन इतनी तरक्की के बावजूद भी इन तथ्यो को नकारा नहीं जा सकता की उनकी स्थिति आज भी सोचनीय है।
5. शान्ति कुमार स्याल (2017), कामकाजी महिलाएं समस्याएं और समाधान, प्रस्तुत पुस्तक में बताया गया है कि कामकाजी महिला एक सशक्त महिला की श्रेणी में आती है। महानगरीय संस्कृति में परिवार में सांस्कृतिक मूल्यों के सृजन के संदर्भ में उसकी भूमिका और भी अधिक महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि वहां पारिवारिक वातावरण के रूप में संयुक्त परिवार के अन्य सदस्य या आस-पड़ोस का योगदान नगण्य होता है। विपरीत इसके पढ़ी-लिखी होने के बावजूद भी महिलाएँ घरेलू वातावरण में अन्ध विश्वास व दकियानूसी विचारधाराओं का शिकार हो जाती हैं।

कार्यशील महिला : जीविकोपार्जन के लिए किए जाने वाले किसी भी काम को कार्य कह सकते हैं। जीविकोपार्जन शब्द से यह भी स्पष्ट होता है कि श्रम का भुगतान किया जाए। यह भुगतान पैसों के रूप में भी हो सकता है या किसी अन्य वस्तु के रूप में भी हो सकता है। इसी भुगतान के कारण ही गृहिणी और कार्यशील महिला में अन्तर आ गया है। व्यापक अर्थ में कार्यशील महिला वह है जी अर्थोपार्जन के लिए घर या बाहर कुछ काम करती हो। कपूर (1976) के अनुसार कार्यशील महिला शब्द का प्रयोग प्रायः नौकरी करने वाली महिला के संदर्भ में किया जाता है अर्थात वे महिलाएं जो घरों के बाहर नियमित रूप से आर्थिक व व्यावसायिक गतिविधियों में भाग लेती है। भारत में कलकारखानों उद्योग धन्धों और सरकारी व गैर-सरकारी कार्यालयों में वेतन पर काम करने वाली सभी महिलाएं कार्यशील महिलाएं हैं। इस अर्थ में दूसरे घरों में कार्य करने वाली महिलाएं भी कार्यशील है क्योंकि उन्हें इस कार्य के लिए वेतन मिलता है। इसी प्रकार जो महिलाएं अपना स्वयं का उद्योग-धंधा चलाती है एवं जो सक्रिय रूप से राजनीति में संलग्न हैं वे भी कार्यशील महिलाओं की श्रेणी में आएगी।

भूमिका स्वयं में एक अवधारणा नहीं है। भूमिका प्रस्थिति का गतिशील या व्यावहारिक पहलू है। प्रस्थितिया धारण की जाती हैं जबकि भूमिकाओं का निर्वाह किया जाता है। समाज में किसी प्रस्थिति में हमसे अनुकूल भूमिका

निभाने की अपेक्षाएं की जाती है। अधिकांशतः हम सामाजिक अपेक्षाओं के अनुसार ही भूमिका निभाते हैं। लेकिन अवसर ऐसे भी आते हैं जब हम अपेक्षाओं के अनुसार भूमिका का निर्वाह नहीं कर पाते या ऐसा अवसर आ जाए जब कि दो भिन्न प्रस्थितियों की भूमिका निभानी हो और उनके मानसिक अंर्तद्वन्द्व का अनुभव होने लगे तो उसे भूमिका संघर्ष कहा जाता है। जब कार्यशील महिलाएं घर व बाहर की विरोधी भूमिकाओं में सामंजस्य व समन्वय स्थापित नहीं कर पाती है तो उनके व्यवहारों, आचरणों में असंगतियां पैदा हो जाती है. जिससे पारिवारिक असंगति उत्पन्न होती है। कार्यशील महिलाओं को अपनी विरोधी भूमिकाओं में सामजस्य स्थापित करना पड़ता है। कुछ ही महिलाएं इस सामंजस्य को स्थापित पाती है। परन्तु जो महिलाएं उक्त भूमिकाओं में सामंजस्य स्थापित नहीं कर पाती है उनके व्यवहार एवं आचरण में असंगतियां उत्पन्न होती हैं। फलस्वरूप पारिवारिक विघटन क्लेष, मानसिक तनाव, कार्यशीलता में कमी, दबाब, कार्यकारी सम्बन्धों प्रभाव, पति-पत्नी में आपसी अनबन एवं टकराव, बच्चों के पालन-पोषण पर उचित ध्यान न देना, दैनिक कार्यों के प्रति उदासीनता इत्यादि अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। प्रश्न यह है कि क्या पारिवारिक असंगतियों के कारण उनमें तनाव का निर्माण हो रहा है? इन असंगतियों के क्या प्रभाव एवं परिणाम हो रहे हैं? कार्यस्थलीय असंगतियों के कारण एवं परिणाम क्या है? इन प्रश्नों के तथ्यात्मक उत्तर समाजशास्त्र के लिए महत्वपूर्ण है।

गौरतलब है कि महिलाएं घरों में जो घरेलू कार्य करती हैं, उन कार्यों का कोई महत्व नहीं समझा जाता। क्योंकि लोगों को लगता है कि घर में किया गया कार्य आर्थिक रुप से कोई योगदान नहीं देता। सही मायने में देखें तो महिलाओं द्वारा किये गए घरेलू कार्य आर्थिक रुप से सीधा-सीध ॥ योगदान देते हैं लेकिन सामाजिक तौर पर घरेलू कार्य करना महिलाओं की ही मुख्य जिम्मेदारी मानी जाती है। परिवारों में आज भी किसी महिला को तब तक बाहर कार्य करने देते हैं जब तक कि उसका असर घरेलू कार्यों पर नहीं पड़ता। जब नौकरी की वजह से कोई महिला घरेलू कार्यों को नहीं कर पाती तो परिवार को इस बात से समस्या होने लगती है। इसके अतिरिक्त अन्य समस्याऐं भी कामकाजी महिलाओं के समक्ष आती है यथा -

- उनको महत्त्वपूर्ण भूमिका न दिये जाना।
- कामकाजी महिलाओं को कार्यक्षेत्र में आने-जाने की सुरक्षा की समस्या।
- महिलाओं का प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष तौर पर मजाक बनाना।
- कार्यालय में सेक्सुअल हरासमेंट का डर।
- महिलाओं को अपने सहकर्मी से पर्याप्त सम्मान नहीं मिल पाना।
- मानसिक दबाव।
- महिलाएँ अधिकांशतः असंगठित क्षेत्र में ही हैं, ऐसे में व्यवसाय जीवन इत्यादि की असुरक्षा तथा निम्न वेतन इन सभी समस्याओं का सामना।
- स्वास्थ्य समस्यायें।
- कल्याणकारी योजनाओं की जानकारी का अभाव।
- महिलाओं को जैविक कार्यों (मातृत्व इत्यादि) के लिये भी पर्याप्त छुट्टी न मिल पाना।

जब कामकाजी महिलाओं की समस्याओं पर चर्चा की जाती है तो उनकी घरेलू जिन्दगी भी इसके अंदर समाहित हो जाती है। देखा जाए तो भारतीय कामकाजी महिला का संबंध समाज के मध्यम वर्ग या निम्न मध्यमवर्ग से होता है। उच्च वर्ग की स्त्रियों जीवन निर्वाह के लिए कार्य नहीं करती। कार्य करने के पीछे उनका उद्देश्य मात्र समय बिताना होता है जबकि घरेलू कार्यों में भी उनकी कोई भूमिका नहीं होती। एक मध्य अथवा निम्न मध्य वर्ग की कामकाजी महिला का नसीब ऐसा नहीं होता है। निरुसंदेह उसकी स्थिति दो नावों में सवार व्यक्ति के समान होती है

क्योंकि एक ओर उसे कार्यालय में तनाव के अन्त्तगत कार्य करना होता है, साथ ही महिला होने के कारण अधिकारी वर्ग उसे दबाने की कोशिश में लगा रहता है। चाहे वह कितनी भी कठोर उद्यमी क्यों न हो, सभी उसकी गलती निकालने और डॉटने में अपना पुरुषत्व सार्थक समझते हैं। बेचारी स्त्री जीविका से हाथ धो बैठने और अन्य कर्मचारियों, परिवार और समाज के सामने प्रतिष्ठा की हानि के डर से आवाज नहीं उठाती है। उसका जीवन तलवार की धार पर चलने के समान होता है इसके अतिरिक्त उसे घरेलू दायित्वों को भी निभाना होता है। कार्यालय में इतना समय व्यतीत करने के कारण उसकी पारिवारिक जीवन में भी अस्त-व्यस्तता आ जाती है। ऐसे में वह अपने घर के कामों को ठीक ढंग से करने में सक्षम नहीं हो पाती है। पश्चिमी देशों की तरह भारत में घरेलू कामों के पति पत्नी का हाथ नहीं बंटाते है कार्यालय से थकी-मांदी घर लौटने पर उसे बच्चों, पति की आवश्यकताओं को देखना पड़ता है। खाना बनाना, मेहमानों की तीमारदारी और उस पर भी सदैव खुश दिखाई देना ही भारतीय कामकाजी महिला की नियति है।

समाधान : आज अधिकांश कामकाजी महिलाऐं अपनी भूमिका और कार्य के मध्य संघर्ष का अनुभव करती है यह संघर्ष उनके व्यक्तित्व पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है और वे दोनों में से किसी भी स्थान से भाग नहीं सकती अधिकांश महिलाएं अपने से अत्यधिक समझौता करके परिवार और कार्यस्थल के बीच सामंजस्य करती है। कामकाजी महिलाओं को कार्य के दौरान अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है तथा परिवार के सदस्यों का सहयोग भी उन्हें या तो मिलता ही नहीं है या बहुत कम मिल पाता है। अतः जब तक घर गृहस्थी के कार्यों में कामकाजी महिलाओं की सहायता उनके पति व अन्य सदस्यों के द्वारा नहीं की जायेगी तब तक कामकाजी महिलाओं का कार्य का बोझ हलका नहीं होगा अतः आवश्यकता इस बात की है कि महिलाओं के दागित्यों के प्रति पुरुष मानसिकता को परिवर्तित किया जाये अन्यथा कामकाजी महिलाओं को दोहरे कर्तव्यों का पालन करते हुए संघर्ष का सामना करना ही पड़ेगा। कामकाजी महिलाओं की जिंदगी में संघर्ष करने हेतु कुछ सुझाव दिये गये हैं -

- सामाजिक व राजनैतिक जीवन में अधिक सहभागिता।
- घर से बाहर, जैसे- ऑफिस, परिवहन के साधन इत्यादि की व्यवस्था इतनी सुरक्षित एवं वुमन फैडली हो कि वे वहाँ सुरक्षित महसूस कर सकें।
- सर्वप्रथम महिलाओं की शिक्षा की उचित व्यवस्था हो क्योंकि शिक्षा ही महिलाओं के सब प्रकार के कल्याण में सहायक होती है.
- महिलाओ की जैविक आवश्यकता को देखते हुए छुट्टियों की पर्याप्त व्यवस्था हो।
- सभी कार्य क्षेत्रों से घर तक महिलाओं के लिए विशेष वाहन की व्यवस्था की जाये।
- महिलाओं के प्रति परिवार और समाज की सोच में बदलाव ।
- प्रोन्नति में समानता।
- पुरुष स्त्रियों के साथ उपेक्षित व्यवहार न करें।
- संगठित क्षेत्र में तो 'मातृत्व लाभ' अब अनिवार्य हो गया है परंतु असंगठित क्षेत्र में भी ऐसी कुछ व्यवस्था हो या फिर सरकार की ओर से कुछ वित्तीय सुरक्षा दी जाए।
- 'डॉमेस्टिक हेल्प' को विनियमित तथा सुरक्षित बनाया जाए, ताकि महिलाओं की सहायता हो सके। तभी हम सार्वजनिक जीवन में महिलाओं की अधिकाधिक भागीदारी बढ़ा सकेंगे और अरुंधति राय, चंदा कोचर, किरण मजूमदार की तरह अनेक महिला उद्यमी, लोक सेवक बन सकेंगी।
- देश की अर्थव्यवस्था में महिलाओं की भागीदारी को तभी सुनिश्चित किया जा सकता है जब घरों में घरेलू काम में पुरुषों की भागीदारी सुनिश्चित की जाए। घरों में बचपन से ही लड़कों को घरेलू काम के प्रति जागरूक और जिम्मेदार बनाने की जरुरत है ताकि बड़े होकर उन्हें ये ना लगे कि घरेलू कार्य तो सिर्फ महिलाओं से ही जुड़े हैं।

बहुत जरुरत है कि हम घरों में पुरुषों को घरेलू काम में काम का साथी बनाए तभी कामकाजी महिलाएं काम के दोहरे बोझ से मुक्त हो पाएंगी।

व्यापक कानूनों, नीतियों और ऐसे पहलुओं को लागू करना जो लिंग-आधारित भेदभाव को रोकते हैं, समान काम के लिए समान वेतन को बढ़ावा देते हैं और कार्यस्थल में यौन उत्पीड़न जैसे मुद्दों का समाधान करते हैं, महिला सशक्तिकरण की दिशा में आवश्यक कदम हैं। आज जीवन के हर क्षेत्र में महिलायें अपनी योग्यता और क्षमता का परिचय दे रही हैं। कार्यक्षेत्र की जिम्मेदारियों को बखूबी निभा रही हैं। अगर पुरुष महिलाओं के साथ प्रत्येक मार्ग पर कंधे से कंधा मिलाकर चले और उनको अपना पूरा सहयोग दे तो महिलाओं के विकास की धारा अनवरत चलती रहेगी। तभी एक स्वस्थ समाज और सुखी परिवार का सपना साकार हो सकेगा। समाज अपनी मानसिकता को बदले तमी महिलाओं के कार्यक्षेत्र में आने वाली सभी बाधाएँ दूर हो सकेगीं।

निष्कर्ष : कामकाजी महिलाओं पर निष्कर्ष में यह कहा जा सकता है कि समाज और अर्थव्यवस्था में उनका योगदान अत्यधिक महत्वपूर्ण है। उनकी भागीदारी न केवल परिवार के आर्थिक स्थिति को मजबूत करती है, बल्कि समाज में लैंगिक समानता को भी बढ़ावा देती है। हालाँकि, उन्हें कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है. जैसे कार्य-जीवन संतुलन, लैंगिक भेदभाव, और कार्यस्थल पर सुरक्षा की कमी। इन चुनौतियों के बावजूद, कामकाजी महिलाएँ अपने दृढ़ संकल्प और मेहनत से सफलता प्राप्त कर रही हैं। उनके लिए अनुकूल नीतियों और समर्थन की आवश्यकता है, ताकि वे और अधिक आत्मनिर्भर और सशक्त बन सकें। समाज में एक पहचान होती है। घरेलू महिला की तुलना में समाज में उसका उच्चतर स्थान होता है, परन्तु इस पहचान के एवज में वह भागम-भाग में उलझ कर रह गयी है। जिन परिवारों में बड़े बुजुर्गों के रूप में दादा-दादी अथवा नाना-नानी का संरक्षण बच्चों को नहीं मिल पाता वहाँ बच्चों के लिए उसकी चिन्ता उसके कामकाज को प्रभावित करती है। कार्यक्षेत्र में अतिरिक्त समय की माँग उसके लिए तनाववर्धक हो जाती है। अतः अपने कार्यक्षेत्र के दायित्वों की सहज सम्पन्नता में इनका योगदान पुरुषों के समकक्ष नहीं हो पाता। भारतीय संस्कृति के संदर्भ में यह स्थिति वर्तमान परिप्रेक्ष्य में सत्य है। संक्रमण के इस दौर के गुजरने के बाद भावी पीढ़ी की महिलाएँ सम्भवतः सशक्तता के अधिक उच्च प्रतिमानों को स्थापित कर सकेंगी और पुरुषों के समकक्ष स्वयं को स्थापित कर सकेंगी।

यद्यपि महिला चाहे घरेलू हो या कामकाजी उसकी भूमिका महत्त्वपूर्ण है, परन्तु घरेलू महिला के कार्य को कोई मूल्य निर्धारित न होने के कारण कामकाजी महिला को अधिक महत्त्व दिया जाता है, परन्तु वर्तमान कामकाजी महिलाओं में सशक्तता के साथ पनप रही श्लिव इन रिलेशनशिप की प्रवृत्ति, अधिक उम्र में विवाह तथा विवाह के पश्चात् बच्चों की जिम्मेदारी से भय जैसे प्रश्न परिवार नामक संस्था के अस्तित्व पर प्रश्न चिह्न लगाने वाले हैं। अतः कामकाजी महिलाओं को विकास के पथ पर अग्रसर रहते हुए उपरोक्त प्रश्नों पर अवश्य विचार करना होगा तथा पुरुषों को भी घरेलू उत्तरदायित्वों के निर्वहन में अवश्य सहभागिता निभानी होगी। तमी महिला सशक्तता को सार्थक बन सकेगी। स्त्री का कार्यशील होना न केवल समय की मांग है वरन महिला सशक्तिकरण एवं स्वतंत्रता व आत्मनिर्भरता की दशा में एक ठोस कदम है। कार्यशील होने से महिला सामाजिक परिस्थिति में परिवर्तन आया है, परिस्थिति परिवर्तन से भूमिका परिवर्तन स्वाभाविक है। कार्यशील महिलाएं समाज के विकास में अपना योगदान दे रही है, वह अपने परिवार की आर्थिक स्थिति को सुदृढ बनाने में सहयोग कर रही है।

संदर्भ :

1. Kapoor P. Bharat Men Vivah aur Kamkaji Mahilaen. Delhi: Rajkamal Prakashan; c1976.
2. Srinivas MN. Social Change in Modern India. New Delhi: Orient Longmon; c1972.
3. शर्मा जी.एल. 2015 सामाजिक मुद्दे, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, नई दिल्ली।

4. आहुजा राम 2006 भारतीय सामाजिक व्यवस्था, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, नई दिल्ली दिल्ली।
5. शर्मा, प्रज्ञा (2001) भारतीय समाज में नारी, पोइन्टर पब्लिकेशनः नयी दिल्ली।
6. अखिलेष नारायण, महिला एवं बाल कानून, आगरा लॉ एजेन्सी।
7. वर्मा, संजय, (2010) तकदीर बदलती महिलाएं, समाज कल्याण, वर्ष 55 अंक 6 फरवरी।
8. पांडा, स्नेहलता जेन्डर, एन्वायरमेन्ट एण्ड पार्टिसिपेशन इन पालिटिक्स एम डी पब्लिकेशन नयी दिल्ली।
9. सिन्हा, पुष्पा, रोल कनफिलिक्ट अमंग द वर्किंग वूमेन, अनमोल पब्लिकेशनः नयी दिल्ली।
10. कुमार, राज नारी के बदलते आयामः नयी दिल्ली।
11. नन्दा, बी0आर0 (1976) इण्डियन वीमेन, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा0लि0 दिल्ली पृष्ठ संख्या, 19-21.
12. परमार, दुर्गा (1982) श्रमजीवी महिलाएं और समकालीन पारिवारिक संगठन, साहित्य भवन आगरा। पृष्ठ संख्या, 10-17.
13. तिवारी रेखा, शर्मा दिवाकर (2013), घरों में काम करने वाले कामकाजी महिलाओं का समाजशास्त्रीय अध्ययन, अमन प्रकाशन, नई दिल्ली।
14. चित्तौड़ा के निर्मला (2016), भारत में कामकाजी महिलाओं की स्थिति, आत्माराम एंड संत प्रकाशन, नई दिल्ली।
15. कुमार शांति (2017), कामकाजी महिलाएं समस्या एवम समाधान, जीएसटी पब्लिकेशन नई दिल्ली।

•